द्वारा लिखित स्व. डॉ. विजय लाल
मंगलवार, 21 नवम्बर 2006 18:50 - अंतिम अद्यतन गुरुवार, 20 मार्च 2008 14:58

''जो अपना क्रूस लेकर मेरे पीछे न चले वह मेरे योग्य नहीं।'' मत्ती 10:38

क्रूस मसीहियों का बहुत प्रचलित प्रतीक हो गया है, चर्चों के गुम्बदों पर, मसीही संस्थाओं के भवनों पर, कब्रों पर, हर जगह क्रूस दिखाई देता है। अब तो सजावट के लिए गले के हारों और अंगूठियों पर भी क्रूस के निशान देखे जा सकते हैं। प्रचलन और प्रचार ने क्रूस के प्रतीक के महत्व को कुछ घटाया ही है अत्यधिक परिचय से पीड़ित, हम क्रूस की गहराई तक पहुंचने का प्रयास नहीं करते।

प्रथम क्रूस का ऐतिहासिक सत्य है वह कुछ ऐसा है जो मिथक नहीं, वास्तव में घटा है, उसे भोगा है ईश–पुत्र ने, मसीहा ने – और किसी विशेष संदर्भ में भोगा है।

क्रूस का कोई कारण है, काल भले ही न हो क्योंकि संदर्भ अनन्त है, किसी विशेष बिन्दु पर घटित है पर सब बिन्दुओं पर प्रभाव है। वास्तव में काल में घटी घटना काल से परे है, इस वक्तव्य में क्रूस पर घटी घटना का वर्णन हीं करूंगा क्योंकि हम सब परिचित हैं, अति परिचित हैं। विवेचना करने का प्रयास करूंगा, उसके अर्थ में कुछ सार्थकता ढूंढने का प्रयास करूंगा; जीवन दर्शन के लिए जो उसने भोगा और जो मैं भोग रहा हूं उसमें क्या कहीं कोई सम्बन्ध है या हो सकता है? उस ईश्वरीय घटना और मानव अस्तित्व में कहीं कोई सम्बन्ध है क्या?

क्रूस यह दर्शाता है कि मानव परमेश्वर के विरूद्ध विद्रोह में किस सीमा तक जा सकता है। क्रूस में मानव के पतन की पराकाष्ठा प्रदर्शित होती है, पाप की परिसीमा प्रगट होती है अदन की बारी में वर्जित फल खाने के ईश्वरीय निर्देश की अवज्ञा के पश्चात भाई द्वारा भाई की हत्या, क्रूस के परिपेक्ष्य में छोटे दिखाई देते है, क्रूस मानव द्वारा ईश्वर की हत्या के प्रयास का प्रतीक है, मानव हृदय में पाप की सत्ता का प्रतीक है।

क्रूस की क्रूरता मात्र हाथ और पांव में ठोंके गए कील और माथे पर पहनाए गए कांटों के ताज और पीड़ा, और परमेश्वर से परित्यक्तता और प्यास और मृत्यु में ही नहीं है, मानव की अवर्णनीय कठोरता, क्रूरता, कलुषता, घृणा और परमेश्वर के तिरस्कार में है।

क्रूस के द्वारा मानव के अंधकारपूर्ण हृदय में झांका जा सकता है।
किन्तु क्रूस के माध्यम से हम परमेश्वर के प्रेम पूर्ण हृदय में भी झांक सकते हैं, क्रूस में हम देखते है कि परमेश्वर मनुष्य को अपने प्रेम से परिचित कराने के लिए किस सीमा तक जा सकता है।

क्रूस परमेश्वर के प्रेम का प्रतीक है – वह हमें स्मरण दिलाता है प्रभु यीशु मसीह का, जो प्रेम का व्यक्तिकरण था – वह कैसी ऐसी भाषा थी जिसके द्वारा परमेश्वर ने मानो कहा जगत से ''मैं तुम से प्रेम करता हूं'' उसका इस संसार में आना परमेश्वर के प्रेम का परिणाम था, उसका जीवन प्रेम की कहानी कथा थी, उसके संदेश प्रेम की कविता थे, उसकी मृत्यु प्रेम का प्रमाण थी और क्रूस पर उसकी मृत्यु प्रेम की परिकाष्ठा थी, –क्रूस मात्र इस मृत्यु का प्रतीक नहीं, उसके सम्पूर्ण प्रेम का प्रतीक बन गया है।

द्वारा लिखित स्व. डॉ. विजय लाल
मंगलवार, 21 नवम्बर 2006 18:50 - अंतिम अद्यतन गुरुवार, 20 मार्च 2008 14:58

क्रूस परमेश्वर को प्रकाशित करता है – उसके उस पहलू को, उस आयाम को प्रदर्शित करता है जिससे हम अनभिज्ञ थे, अन्जान थे, वह बताता है परमेश्वर प्रशासक नहीं पिता है, पीड़ा है उसकी पुत्रों के लिए, –पुत्र मांगे तो वह देता है, ढूंढे तो वह उपलब्ध कराता है, खटखटाए तो वह खोलता है। उसकी करूणा की दृष्टि सारी सृष्टि पर बनी रहती है – घास के फूल को वह अद्भुत वैभव के वस्त्रों से सजाता और एक कौरैया की भोजन व्यवस्था करता, जब एक गौरैया की मृत्यु होती वह प्रेम और करूणा से उस पर दृष्टि करता, वह विधवा की दमड़ी के दान पर दृष्टि करता और उसकी प्रशंसा करता है और एक भेड़ खो जाती तो उसे ढूंढने निकलता है, भटके पापी पुत्र के वापस आने की वह राह देखता है और पापिनी पुत्री के अपराध क्षमा करता है, जिसकी संसार आलोचना करता है वह उसके साथ संगति करता है, जहां संसार पत्थरवाह करता वह क्षमा करता है, वेश्याओं के लिए स्वर्ग के द्वार खोलता है और पाप पूर्ण नगरों के लिए वह आंसू बहाता है, वह कठोर न्याय करने वाला परमेश्वर नहीं, अपार प्रेम और दया और करूणा का स्त्रोत है।

मनुष्य की अस्वीकृति और तिरस्कार की प्रतिक्रिया, क्रूस में, अपने प्रेम द्वारा वह व्यक्त करता है। मानव पाप और ईश्वरीय प्रेम का अपूर्व पवित्र संगम स्थल है क्रूस, बहुत पवित्र है वह।

क्रूस वह बिन्दु है जहां मानव के पाप का ईश्वरीय समाधान है – तीन क्रूस थे कलवरी पर; बहुत खूबसूरत चित्रण है, बीच में यीशु, परमेश्वर के प्रेम का प्रतीक; दोनों ओर एक-एक डाकू मानव के पाप के प्रतीक; एक डाकू बच गया, उसने स्वीकार किया प्रभु को, उसी दिन प्रभु के साथ स्वर्ग जाने की निश्चयता (assurance) मिली। दूसरे ने तिरस्कार किया, अनन्त अंधकार का भागी हुआ।

कलवरी के क्रूस पर ईश्वर ने जो कुछ कर दिया है उस पर हमारी क्रिया संभव प्रतिक्रियाएं हो सकती हैं, हमारी क्रिया नियति हो सकती है, इसका चित्रण है कलवरी के तीन क्रूसों में। हम स्वीकार कर सकते हैं। एक छोर क्रूस का, इंगित करता है स्वर्ग को ऊपर, एक करता है नर्क को, नीचे; नियति हमारे हाथ में है परन्तु क्रूस के दो और छोर हैं वे आजू–बाजू इंगित करते हैं, मानव की ओर –साथी मानव की ओर। कलवरी की घटना यदि हमें ईश्वर से जोड़ती है तो मानव से भी जोड़ती है। ईश्वर से जुड़ गए तो मनुष्य से जुड़ना तो अपरिहार्य है, पिता से जुड़ेंगे तो भाई से भी जुड़ेंगे – God was in Christ reconciling the world unto Himself. ईश्वर यीशु में था संसार को स्वयं से पुन: जोड़ते हुए, पुन: मिलाप करते हुए। मानव पाप ने मानव और परमेश्वर के सम्बन्धों में जो खाई उत्पन्न कर दी थी उसे पाट दिया क्रूस ने।

अब मानव क्रूस के द्वारा परमेश्वर के पास आ सकता है, क्रूस एक सेतु है, यह ईश्वर का कार्य है अब सेतु से परमेश्वर के पास पहुंचना हमारा कर्तव्य है, क्रूस पर यीशु के फैले हाथ, ईश्वर के आमंत्रण के प्रतीक हैं, बढ़े हुए हाथ हैं –

फैले हुए हाथ हैं पिता के आलिंगन का आमंत्रण है, पुनर्मिलाप कर लो, टूटे सम्बन्ध जोड़ लो,
असम्बद्धता दूर करो, सम्बद्ध हो जाओ, योग हो जाए परमात्मा से –पर ईश्वर के फैले हुए हाथ प्रयासरत हैं कि ईश्वर के सेतु से मानव और मानव जुड़ जाएं –यह योग तभी साकार और सार्थक और स्थायी होगा जब परमेश्वर के प्रेम द्वारा जोड़ा जाएगा और परमेश्वर के प्रेम का क्रूस से बेहतर प्रमाण और क्रिया हो सकता है? तो क्रूस एक सेतु है मानव और परमात्मा के बीच और मानव और मानव के बीच। क्रूस एक जीवन दर्शन है – यह जीवन दर्शन है कि पीड़ा वास्तव में है। प्रभु यीशु की सुन्दरता हमें इतना मोहित कर लेती है कि उसकी जो छवि, जो स्वरूप हमारे सामने रहता है वह अधूरा है –उसने मात्र भूखों को खिलाया नहीं वह स्वयं भूखा रहा; वह सरिफजल पर या सोसन के फूलों के बीच नहीं चला, कलवरी के कांटों पर भी चला; उसने लोगों को चंगा किया पर अपनी पीठ पर चोटें और घाव भी खाए –

द्वारा लिखित स्व. डॉ. विजय लाल
मंगलवार, 21 नवम्बर 2006 18:50 - अंतिम अद्यतन गुरुवार, 20 मार्च 2008 14:58

लोगों को स्वर्गीय ताज प्राप्त करने की प्रेरित तो किया पर कांटों का ताज भी पहना –
उसने छोटे बालकों को गोद में उठाकर पिता जैसा प्रेम ही नहीं दिया, अपने पिता परमेश्वर के प्रेम से पीड़ा; पूर्ण अलगाव भी सहा।

हमें उसके जीवन के महिमा और आलोकपूर्ण क्षण तो स्मरण रहते हैं पर उसके संतापित और अंधकार पूर्ण क्षण हम भूल जाते हैं। रूपान्तरण के पर्वत पर प्रभु का आलोकपूर्ण, महिमापूर्ण, सूर्य सा चमकता चेहरा तो है पर प्रतिपीड़न से बिगड़ा उसका चेहरा भी है त्यागा, दुर्दशा में पड़ा, दुखी पुरुष का चेहरा भी है, जिससे लोग मुंह फेर लेते थे –

हम भूल जाते हैं कि उसने जीवन से जीवन में प्रवेश कितनी पीड़ा और यातनापूर्ण मृत्यु से होकर किया।

तो क्रूस के जीवन दर्शन में पीड़ा तो वास्तविक है, परमेश्वर की पीड़ा भी वास्तविक है – "Suffering of God is also very real". हमारी धारणा कि ऐसे परमेश्वर की है जिस पर हमारी त्रासदी का, दर्द का, कोई प्रभाव नहीं, वह देखता है, जानता है, पर प्रभावित नहीं होता जो हमारी पीड़ा से insulated है, सहानुभूति शायद कर सकता है, समानुभूति नहीं रख सकता चाहे भी तो नहीं क्योंकि वह पीड़ा से परे है। क्रूस का दर्शन है कि परमेश्वर पीड़ा से परे नहीं, पीड़ा की परिधि में है, उसने पीड़ा को देखा है, सहा है, अनुभव किया है, जाना है।

क्रूस का दर्शन है कि पेंचने के द्वारा ही बचाया जा सकता है, खोने के द्वारा ही पाया जा सकता है। अपना रुधिर बहाने की क्षमता न हो तो आशीष देने की पवित्रता संभव नहीं –

You can not bless unless you bleed. गिरे हुओं को उठाना हो तो झुकना पड़ेगा।

दूसरों को बचाना हो तो सलीब पर स्वयं को खोना पड़ेगा, परमात्मा की ऊंचाईयों तक पहुंचना हो तो विनम्रता से घुटनों पर नीचे गिरना पड़ेगा। बड़ा बनना हो तो मानवता के पांव धोने की नम्रता अर्जित करना होगी। कहीं कोई विश्वास्तविक विकास संभव नहीं हुआ जब तक कोई क्रूस पर स्वयं को मिटाने को तत्पर नहीं हुआ। क्रूस का दर्शन मात्र यह नहीं है कि इतिहास के किसी क्षण में यीशु ने क्रूस उठाया। – पर यह है कि उसके अनुयायियों को हर क्षण, हर पल, हर क्रिया में, हर प्रतिक्रिया में, क्रूस के मर्म को जानते हुए उसकी पीड़ा सहने को तत्पर और तैयार रहना चाहिए।

– ऐसा हो सके तो हृदय धन्यवादित होना चाहिए क्योंकि यदि हम उसके लिए पीड़ा सहने के पात्र चुने जाते हैं तो यह हम पर उसका अनुग्रह ही होगा।